तुलसीदास कृत रामचरितमानस में लोकतत्त्व

कमलेश कमल

"शील-शक्ति-मर्यादा के प्रकृष्टतम प्रमाण हैं राम।

ऐसे ही नहीं लोक में पूजे जाते हैं प्रभु राम।।"

युग-युगांतर के लिए मनुष्य की स्मृति में अत्युत्तम आदर्श का प्रकाशस्तंभ हैं राम। चारित्रिक औदात्य, पूर्ण-चेतना, आलोचनात्मक विवेक एवं दार्शनिक मूल्यानुभूति के पूर्ण-परिपाक हैं 'श्रीराम'।

रामचरितमानस है— राम के चरित को हर मानस में उद्भासित-अवस्थित करने का मानवता के इतिहास का सर्वोत्तम प्रयास! इसके माध्यम से तुलसीदास ने राजनीतिक-पारिवारिक-सामाजिक-आध्यात्मिक जीवन के उच्च आदर्शों को प्रस्तुत कर विशृंखलित हिंदू समाज को सूत्रबद्ध करने का महनीय प्रयास किया है। यह तुलसी की सर्जनात्मक कल्पना का वैभव भा-स्वर है, जो असाधारण अर्थ-गांभीर्य से युक्त है एवं लोक-मंगल विधायिनी चेतना का ऊर्जस्वित् स्वर है। यह केवल एक महाकाव्यात्मक ग्रंथ ही नहीं है जिसके साथ धार्मिक आस्था सन्नद्ध है; वरन् यह तो मनुष्य जाति के आत्यन्तिक शुभ की सम्यक् परिकल्पना है।

आर्ष परंपरा में महानायकीय अथवा दैवीय चारित्र्य हेतु 14 गुण बताए गए हैं- सत्य, धर्म, प्रतिभा, कृतज्ञता, उदारता, चारित्र्य, अनसूया, सात्त्विक क्रोध, आत्मसम्मान, सर्वभूतहित, नीति अनुसरण, अक्रोध एवं वाग्मिता। रामचरितमानस में प्रभु श्रीराम में ये सभी गुण घनीभूत रूप में विद्यमान मिलते हैं। इन सब के अतिरिक्त और इन सबसे पहले राम और राम-कथा का जो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व इस ग्रंथ में मिलता है, वह है- लोकतत्त्व। सबसे पहले यह देखना समीचीन होगा कि लोकतत्त्व क्या है?

लोकतत्त्व से अभिप्राय

लोकतत्त्व एक सामासिक पद है, जो दो शब्द लोक और तत्त्व से निर्मित है। इसमें लोक 'विशेषण' है तथा तत्त्व 'विशेष्य'। लोक एक अतिप्रचलित और बहुलार्थी संकल्पना है, जिसको विविध रूपों में व्याख्यायित करने की चेष्टा हुई है और सभी का अपना स्वत्व और महत्त्व है। इससे बड़ी बात कि लोक शब्द का इतना अर्थविस्तार हुआ है कि इसका अर्थ सदा ही अपनी परिभाषा की सीमा का अतिक्रमण कर जाता है। यह जीवन का महासमुद्र है, जिसमें भूत, भविष्य और वर्तमान सभी समाहित होते हैं। वेद तक लोक की जड़ें पहुँची हुई हैं। लोक् + घञ् = लोक। 'लोक्' धातु का अर्थ है- देखना, नजर डालना, प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करना आदि।

ऋग्वेद में लोक 'जीव'(जन) तथा 'स्थान' दोनों के लिए प्रयुक्त हुआ है। पाणिनी कृत अष्टाध्यायी, पतञ्जलि कृत 'महाभाष्य', भरतमुनि कृत 'नाट्यशास्त्र' इत्यादि में लोक का अर्थ शास्त्रेतर, वेदेतर अथवा सामान्य है। महाभारत में लोक 'जनता' के लिए प्रयुक्त हुआ है। आगे हिंदी साहित्य में लोक से संसार तथा जनसामान्य की प्रतीति होती है।

लोक का सामान्य अर्थ जनसाधारण है, जो अँगरेज़ी के 'Folk' का समार्थक शब्द है, परंतु व्यवहार में यह 'ग्राम्य' अथवा 'जनपदीय' अर्थ में व्यवहृत होता है। अस्तु, लोक की अभिव्यक्तियों के जितने माध्यम हैं या इसमें इसमें जितने तत्त्व मिलते हैं, सब लोकतत्त्व के ही अभिधान हैं। इस प्रकार, लोकतत्त्व से आशय लोकसाहित्य, लोककला, लोककाव्य, लोकनृत्य, लोकगीत, लोकवार्ता, लोकाचार, लोकपरंपरा, लोकवाणी, लोकचेष्टा, लोकमान्यता इत्यादि से है।

रामचरितमानस में लोकतत्त्व

तुलसीदास कृत रामचरितमानस भारतीय संस्कृति और साहित्य की एक अमूल्य धरोहर है। इस महाकाव्य में तुलसीदास ने राम के जीवन को आदर्श मानकर उनके चरित्र के विभिन्न पहलुओं को प्रस्तुत किया है। रामचरितमानस केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं है, बल्कि इसमें सामाजिक, सांस्कृतिक और मानवतावादी मूल्य भी प्रकट होते हैं। इस महाग्रंथ का काव्यात्मक औदात्य अत्युत्तम है, संवेदनात्मक अन्वेषण अनुपम है और उससे लोक-चेतना मौलिक रूप में सर्वत्र अनुस्यूत है। आश्चर्य यह कि लोक की तमाम अभिव्यंजनाएँ उपस्थित हैं; पर अभिव्यक्ति का कोई दुहराव नहीं है। तुलसीदास ने इस महाकाव्य के माध्यम से सामान्य जनता के जीवन और मूल्यों को बड़े ही सरल और सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया है। यह ऐसा है कि सरस्वती तत्त्व और लोकतत्त्व की अद्‌भुत जुगलबंदी का विश्व-इतिहास में इससे बढ़कर कोई उदाहरण नहीं मिलता।

तुलसीदास ने राम के चरित्र को प्रस्तुत करते हुए यह स्पष्ट किया है कि एक आदर्श राजा वही होता है जो अपने प्रजाजनों के कल्याण के लिए तत्पर रहता है। राम का चरित्र इस बात का प्रतीक है कि राजा का धर्म है कि वह अपनी प्रजा के प्रति न्यायप्रिय, दयालु और कर्तव्यनिष्ठ हो। लोकतत्त्व की एक और महत्त्वपूर्ण विशेषता है कि तुलसीदास ने अपने काव्य में स्त्री और पुरुष दोनों के आदर्श रूप को प्रस्तुत किया है। उन्होंने सीता के चरित्र के माध्यम से नारी के गुणों, उसकी मर्यादा और उसकी शक्ति का वर्णन किया है। सीता का चरित्र भारतीय समाज में स्त्री के महत्त्व और उसकी गरिमा को दर्शाता है।

तुलसीदास ने रामचरितमानस में कई ऐसे प्रसंगों का उल्लेख किया है, जो 'लोक' को सामाजिक समानता, मानवता, न्याय और भाईचारे का संदेश देते हैं। उन्होंने श्रीराम को भीलनी शबरी के जूठे बेर खाते हुए दिखाया है, जिससे सामाजिक समानता और समरसता का संदेश मिलता है। समाज में ऊँच-नीच का भेदभाव मिटाने के लिए तुलसीदासजी ने भरत और निषादराज को गले मिलते हुए दिखाया है। तत्त्वतः, राम और शबरी का मिलन, निषादराज केवट की भक्ति और विभीषण का राम की शरण में आना, ये सभी प्रसंग इस बात का प्रतीक हैं कि रामचरितमानस में जाति, धर्म और वर्ग के भेदभाव को समाप्त करने का संदेश निहित है। यह एक आदर्श समाज की परिकल्पना है, जहाँ हर व्यक्ति का सम्मान होता है और सभी के साथ न्याय होता है।

तुलसीदास ने समाज में व्याप्त विषमता को दूर करने के लिए समन्वय की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया। उन्होंने लोकमंगल के लिए धर्म, राजनीति, समाज, आर्थिक और पारिवारिक जीवन में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया। परिवार के छोटे सदस्य बड़े सदस्यों का आदर करते हैं और बड़े सदस्य छोटे

सदस्यों को भरपूर स्नेह और प्यार देते हैं। श्रीराम, रानी कैकयी के वन-गमन के आदेश के बावजूद, चित्रकूट में सबसे पहले उन्हीं से प्रेमपूर्वक मिलते हैं।

इसी प्रकार, समाज के विभिन्न वर्गों, जातियों और धार्मिक समुदायों के बीच परस्पर प्रेमभाव और मेलभाव को प्रोत्साहित किया गया है। तुलसीदास जी ने राजा और प्रजा, गुरु और शिष्य, गृहस्थ और सन्न्यासी तथा विभिन्न धर्मावलंबियों के बीच परस्पर समन्वय का चित्रण किया है:

“जड़ चेतन जग जीव जत, सकल राममय जानी।

बंदऊँ सब के पद कमल, सदा जोरि जुग पानि।”

इतना ही नहीं, मानस में प्राकृतिक और आध्यात्मिक तत्वों का भी सुंदर समावेश दिखता है। लोकनायक राम के वनवास के प्रसंग में प्रकृति के विभिन्न रूपों का सुंदर वर्णन हुआ है, जो यह दर्शाता है कि मनुष्य का जीवन प्रकृति से कितनी गहराई से जुड़ा है। इस महाकाव्य के माध्यम से भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, समरसता और सदाचार के महत्त्व को भलीभाँति प्रतिपादित किया गया है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा है:-

"लोक-नायक वही हो सकता है जो समन्वय कर सके; क्योंकि भारतीय समाज में नाना प्रकार की विरोधिनी संस्कृतियाँ, साधनाएँ, जातियाँ, आचार, निष्ठा और विचार पद्यतियाँ प्रचलित हैं। तुलसी का सारा काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है- लोक और शास्त्र का समन्वय, गृहस्थी और वैराग्य का समन्वय, भक्ति और ज्ञान का समन्वय, भाषा और संस्कृति का समन्वय, निर्गुण और सगुण का समन्वय, पांडित्य और अपांडित्य का समन्वय। रामचरितमानस शुरू से अंत तक समन्वय का काव्य है।"

तुलसीदास ने अपने काव्य में यथासंभव समाज में समन्वय स्थापित करने की कोशिश की है और लोक में मंगल हो, इसका प्रयास किया है। उन्होंने सगुण और निर्गुण दोनों रूपों में राम की आराधना की है तथा समाज में शिव भक्तों और राम भक्तों के बीच सामंजस्य बनाने का प्रयास किया। इस हेतु राम को शिव का उपासक बताया गया और शिव को राम का उपासक:-

मंगल भवन अमंगल हारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी।

शिव पद कमल जिन्हहिं रति नाहीं। रामहि ते सपनेहु न सोहाहीं।

आगे ज्ञानमार्गी और भक्तिमार्गी समुदायों के बीच के भेद को भी मिटाने का प्रयास भी द्रष्टव्य है :-

“भगतहिं ग्यानहिं नहिं कछु भेदा। उभय हरहिं भव संभव खेदा।”

समाज में परस्पर प्रेमभाव और परोपकार को महत्त्वपूर्ण मानते हुए यह चौपाई द्रष्टव्य है:-

परहित सरिस धर्म नहीं भाई। परपीड़ा सम नहिं अधमाई।

इससे दो कदम आगे बढ़कर तुलसी कहते हैं कि जो व्यक्ति समाज के हित के लिए अपने प्राण तक न्योछावर कर देता है, उसकी प्रशंसा संत जन भी करते हैं:

परहित लागी तजइ जो देही। संतत संत प्रसंसहि तेही।

तुलसीदास ने रामचरितमानस के आरंभ में ही यह स्पष्ट कर दिया कि यह कथा कलियुग के पापों को नष्ट करने वाली और समाज का कल्याण करने वाली है:-

"मंगल करनि कलि मल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की।"

मानस के अंत में, आरती में तुलसीदास ने इसे और भी स्पष्ट किया है:-

"कलि मलि हरनि विषय रस फीकी।

सुभग सिंगार मुक्ति जुबती की।।

दलनि रोग भव मूरि अमी की।

तात मात सब विधि तुलसी की।।"

भाव यह है कि इस कथा में कहीं भी भौतिक भोगों काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार की बात नहीं कही गई है। श्रीराम की कथा लोक के लिए वह संजीवनी है, जो शरीरस्थ और मनस्थ सभी प्रकार के रोगों को दूर कर देती है। जब मनुष्य अंधकार, क्लेश, हताशा, निराशा, अस्थिरता में डूब जाता है, ऐसे समय में रामकथा ही एकमात्र ऐसा रामबाण है, जो प्राणिमात्र को इन विषम परिस्थितियों से उबार कर नयी प्राणशक्ति का संचार कर रसाबोर कर देती है। इसमें भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, समरसता, समन्वय, मुक्ति, सदाचार जैसे उद्दात्त तत्व पूर्ण रूप में विद्यमान हैं।

मानस में राम के जन्म और उनके बाल्यकाल की लीलाओं का अद्वितीय वर्णन किया है। इन प्रसंगों में गहरी मानवतावादी शिक्षा और लोक-तत्त्व की अनमोल झलक मिलती है। राम का जन्म केवल अयोध्या के राजा के रूप में नहीं हुआ, बल्कि वे सम्पूर्ण मानवता के उद्धारक के रूप में प्रकट हुए। उनके आगमन से सभी वर्गों के लोगों में हर्षोल्लास और आनंद की लहर दौड़ गई:-

"भये प्रकट कृपाला, दीनदयाला कौसल्या हितकारी।

हरषित महतारी, मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी॥"

यह प्रसंग दिखाता है कि भगवान राम सबके लिए समान रूप से कृपालु और दीनदयालु हैं। किंतु, माता कौशल्या राम से शिशु रूप में बालसुलभ लीलाएँ करने का अनुरोध करती हैं, जिससे उनकी मातृत्व की भावना और राम के प्रति असीम स्नेह प्रकट होता है।

"कीजै शिशु लीला, अति प्रियसीला, यह सुख परम अनूपा॥"

आगे राम की बाल लीलाओं में उन्हें अन्य बच्चों की तरह खेलते, हँसते और आनंद करते हुए दिखाया गया है। ये लीलाएँ हमें यह सिखाती हैं कि भगवान भी जब मनुष्य रूप में आते हैं, तो वे भी हमारे जैसे होते हैं। यह प्रसंग लोक के धरातल पर मानवता और समानता के महत्त्वपूर्ण संदेश देता है। राम का मानव रूप में जन्म लेना और बालसुलभ लीलाएँ करना यह दिखाता है कि भगवान राम ने हर वर्ग, जाति और समुदाय के लोगों के लिए समानता का संदेश दिया। वे केवल एक राजा या देवता नहीं, बल्कि एक ऐसे व्यक्ति हैं, जो सभी के लिए सुलभ हैं और जिनकी लीलाएँ सभी को आनंदित करती हैं।

वस्तुतः, रामचरितमानस में परिवार और समाज में परस्पर प्रेम और सम्मान के ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं। यह प्रेम और सम्मान ही समाज में शांति और सद्भाव का मूल आधार हैं। राम और लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न के बीच का प्रेम और सम्मान, राम और उनके माता-पिता के बीच की भावनाएँ, सभी ने पारिवारिक और सामाजिक रिश्तों में लोकमंगल के महत्त्व को स्थापित किया है।

सीता स्वयंवर के पश्चात् ऋषि परशुराम के कोप पर जब लक्ष्मण प्रत्युत्तर देते हैं, तो वह लोकवार्ता का अनुपम उदाहरण बन जाता है-

बिहसि लखनु बोले मृदु बानी। अहो मुनीसु महा भटमानी॥

पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू। चहत उड़ावन फूँकि पहारू॥

अर्थात् लक्ष्मण हँसकर कोमल वाणी से बोले - अहो, मुनीश्वर तो अपने को बड़ा भारी योद्धा समझते हैं। बार-बार मुझे कुल्हाड़ी दिखाते हैं। फूँक से पहाड़ उड़ाना चाहते हैं। 'फूँक से पहाड़ उड़ाना' आज भी लोक में मुहावरे के रूप में प्रचलित है।

इहाँ कुम्हड़बतिया कोउ नाहीं। जे तरजनी देखि मरि जाहीं॥

यहाँ कोई कुम्हड़े की बतिया (छोटा कच्चा फल) नहीं है, जो तर्जनी (सबसे आगे की) अंगुली को देखते ही मर जाती हैं। कुठार और धनुष-बाण देखकर ही मैंने कुछ अभिमान सहित कहा था। आज भी पूरे उत्तर भारत में यह लोक-मान्यता है कि कुम्हड़बतिया की ओर ऊँगली नहीं दिखानी चाहिए; क्योंकि यह मुरझा जाती है।

आगे, राम-जानकी विवाह में लोकतत्त्व स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। यह विवाह समाज में एकता, समरसता, नैतिकता और धार्मिकता को बढ़ावा देता है। इस ऐतिहासिक घटना के माध्यम से हमें यह सीखने को मिलता है कि समाज में लोकतांत्रिक मूल्यों और सिद्धांतों का कितना महत्त्व है और वे कैसे समाज को संगठित और सशक्त बना सकते हैं। राम और सीता का विवाह न केवल एक धार्मिक घटना है, बल्कि यह सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। साथ ही, इसमें लोकतत्त्व भी निहित है :-

रामजानकी विवाह एक सार्वजनिक आयोजन था, जिसमें जनकपुर के राजा जनक ने अपनी पुत्री सीता के स्वयंवर का आयोजन किया था। इस स्वयंवर में विभिन्न राज्यों के राजा और योद्धा उपस्थित थे। यह आयोजन समाज के विभिन्न वर्गों को एक साथ लाता है, जिससे समाज में एकता और सामंजस्य का संदेश मिलता है। स्वयंवर की प्रक्रिया अपने आप में लोकतांत्रिक थी। इसमें सीता को अपना वर चुनने का अधिकार दिया गया था। यह उस समय के समाज में महिलाओं के अधिकारों और उनकी स्वतंत्रता को दर्शाता है।

इतना ही नहीं, राम और सीता का विवाह दो प्रमुख राजवंशों- अयोध्या और मिथिला के बीच हुआ, जो विभिन्न क्षेत्रों और संस्कृतियों का प्रतिनिधित्व करते थे। यह विवाह विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक समूहों के बीच आपसी समझ और समरसता को बढ़ावा देता है। इससे समाज में एकता और भाईचारे की भावना का संचार होता है।

राम-जानकी विवाह में धार्मिक और आध्यात्मिक तत्व भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह विवाह हिंदू धर्म के धार्मिक अनुष्ठानों और मान्यताओं का प्रतीक है। विवाह के दौरान किए गए यज्ञ और मंत्रोच्चार समाज में धार्मिक एकता और सामूहिक चेतना को बढ़ावा देते हैं।

राम और सीता का विवाह एक आदर्श जोड़ी का प्रतीक है। राम धर्म, सत्य और कर्तव्य के प्रतीक हैं, जबकि सीता समर्पण, स्नेह और आदर्श पत्नी की प्रतीक हैं। उनके विवाह से समाज में नैतिक मूल्यों और आदर्शों का प्रचार होता है, जो समाज को एक सही दिशा में मार्गदर्शन करता है।

“जानि जनक सुभ कथा सोहाई। सिय विवाह सुभ मंगलदाई॥

भाँति-भाँति नृप बरातिहि सेवा। सबके हिय हर्षित अनुसेवा॥”

इस विवाह में समाज के विभिन्न वर्गों का सामूहिक योगदान महत्त्वपूर्ण था। यह आयोजन केवल राजा जनक या राजा दशरथ तक सीमित नहीं था, बल्कि इसमें समाज के हर वर्ग का योगदान था। यह दर्शाता है कि समाज के सामूहिक प्रयासों से ही बड़े आयोजन सफल हो सकते हैं।

“भूप नृपाल सादर सब। भए एक मन पाइ बिदेह॥

सेवा सबके हियँ हर्ष भरि। मंगलमय हरषित होए सहेष॥”

रोचक तथ्य यह भी है कि मानस में वर्णित शिव-पार्वती विवाह का प्रसंग हो या राम-जानकी विवाह का वर्णन हो, गोस्वामीजी ने विवाह की वैदिक व्यवस्था एवं लोकाचार के कृत्यों का पूर्णतः पालन करवाया है। इसमें वरदेखी, कलश स्थापना, मंडप स्थापना, लगन देना, बारात प्रस्थान, पाणिग्रणन, सिंदूरदान, भाँवर, अगवानी, जनवासा, परछन, गारी गाना, कोहबर आदि विविध वैदिक एवं लौकिक विवाह-रीतियों का पालन रामचरितमानस के विवाहों में मिलता है। यह मानस की लोक-केंद्रित दृष्टि का ही द्योतक है।

विवाहोपरांत महत्त्वपूर्ण प्रसंग राम के वनगमन का है। राम वनगमन करते हैं और लोक के लिए अनुपम उदाहरण प्रस्तुत करते जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप राजा राम से प्रभु राम हो जाते हैं। उदाहरण के लिए, केवट प्रकरण को देखा जा सकता है। यह न केवल रामायण का महत्त्वपूर्ण हिस्सा है, बल्कि यह मानवता, समानता, भक्ति और सेवा के मूल्यों को भी प्रकट करता है और लोकतत्त्व से बहुविध संपृक्त भी है।

विदित है कि केवट प्रकरण रामायण के अयोध्याकाण्ड का एक प्रमुख प्रसंग है, जिसमें भगवान राम केवट से गंगा पार करने का अनुरोध करते हैं।

पद कमल धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं।

मोहि राम राउरि आन दसरथ सपथ सब साची कहौं॥

केवट का यह कथन कि "मुझे अपने हाथ से अपने प्रभु के चरण धोने दो," उसके विनम्रता और परोपकार को दर्शाता है। केवट और राम के बीच का यह संवाद समानता और सेवा-भावना को भी दर्शाता है। राम का विनम्रता से केवट से सहायता मांगना और केवट का भगवान के चरण धोने की इच्छा, दोनों ही लोकतत्त्व के अद्भुत उदाहरण हैं। केवट एक निम्न वर्ग का व्यक्ति है, जबकि राम एक राजा के पुत्र हैं। राम केवट से सहायता माँगते हैं, जिससे यह संदेश मिलता है कि सभी मनुष्य समान हैं और सच्ची विनम्रता एवं समर्पण में जाति या वर्ग का कोई स्थान नहीं है।

इसी प्रकार, श्रवण कुमार की कथा 'लोक' में अति प्रसिद्ध है। लोक-जीवन में माता-पिता की सेवा करनेवाले हर आज्ञाकारी पुत्र को श्रवणकुमार का विशेषण दिया जाता है। इस संदर्भ में यह भी लोक-मान्यता है कि मृत्यु का समय जब निकट आता है तो व्यक्ति एक बार अवश्य सोचता है कि उससे जीवन में क्या शुभ और क्या अशुभ हुआ। मानस में भी ऐसा दृष्टांत मिलता है। महाराज दशरथ को अंधे तपस्वी के शाप की सुधि आई और उन्होंने कौशल्या को सारी कथा सुनाई।

"तापस अंध शाप सुधि आई। कौशल्यहि सब कथा सुनाई।।"

यहाँ यह लोक-विश्वास भी विचारणीय है कि दु:खी हृदय से निकला हुआ शाप कभी बेकार नहीं जाता। वह सर्प की भांति डँसता अवश्य है।

चातुर्य का परिचय देते हुए वशिष्ठ ने दूतों से कहा कि शीघ्र जाओ, लेकिन भरत को महाराज दशरथ की मृत्यु का समाचार मत देना। केवल यह कहना कि गुरु जी ने तुरंत बुलाया है। आज भी सामान्य लोक-व्यवहार यही है कि कोई छात्र हो या कोई परदेसी, घर या कुटुंब में कोई अपशकुन होने पर उसे इतना कहते हैं कि घर आ जाओ; यह नहीं कहते कि तुम्हारे पिता या ऐसे किसी निकट संबंधी का देहांत हो गया है।

इसी प्रसंग में आगे हम देखते हैं कि तुलसीदास जी शकुन और अपशकुन पर रामचरितमानस में विशेष जोर देते हैं। इसी के अनुरूप उनका कथन है कि भरत को ननिहाल में रहते हुए अपशगुन रूपी भयानक सपने रात में आते रहते थे - देखहिं राति भयानक सपना। (चौपाई 156)।

यही अपशगुन जब भरत अयोध्या में प्रवेश करते हैं, तब भी उन्हें देखने को मिलते हैं।

खर सियार बोलहिं प्रतिकूला। (चौपाई 157)

अर्थात् गधे और सियार विपरीत बोल रहे हैं। एक अन्य स्थान पर तुलसीदास जी लिखते हैं :-

असगुन होंहि नगर पैठारा। रटहिं कुभाँति कुखेत करारा।। (चौपाई 157)

अर्थात् नगर में प्रवेश करने पर अपशगुन हो रहे हैं तथा कौवे बुरी जगह बैठकर बुरी तरह से कांव-कांव कर रहे हैं। आज भी लोक में इनको अपशगुन की श्रेणी में रखा जाता है।

किष्किंधाकांड, सुंदरकांड, लंकाकांड सर्वत्र लोकतत्त्व का प्राचुर्य परिलक्षित होता है। यह इतना है कि लोक में मिलने पर जय श्रीराम या जय रामजीकी कह कर अभिवादन किया जाता है तो अंतिम यात्रा 'राम नाम सत्य है' कहकर निकाली जाती है।

मानस के उत्तरकाण्ड को ही देखें तो तुलसी ने परम्परित युगधर्म को नवीन वैज्ञानिक संदर्भ एवं दर्शन दे दिया है। उदाहरण के लिए, कलिवर्णन को देखें, तो यह बात स्फटिक की तरह स्पष्ट होती है। उस समय जो उन्होंने गर्हित सामाजिक मूल्यों का फैलाव देखा, उस पर उन्होंने लिखा और ख़ूब लिखा। वे प्रतिपादित करते हैं कि सभी कालखण्डों में चारों युगों के तत्त्व विद्यमान रहे हैं। किसी भी युग का सत्त्विक पुरुष सतयुग का है और कुत्सित व्यक्ति कलि का-

"सुद्ध तत्त्व समता विग्याना।

कृत प्रभाव प्रसन्न मन माना।।

सत्त्व बहुत रज कछु रति कर्मा ।

सब बिधि सुख त्रेता कर धर्मा।।

बहु रज स्वल्प सत्त्व कछु तमसा।

द्वापर धर्म हरष भय मनसा।।

तामस बहुत रजोगुण थोरा।

कलि प्रभाव बिरोध चहुँ ओरा ।।"

हम यहाँ देखते हैं कि यह कलिवर्णन मिथकीय या ऐतिहासिक कम है, वर्तमान कालिक अधिक है। कहना चाहिए कि यह सामाजिक, सांस्कृतिक घटनाओं और युगीन संस्कृतियों की जीवंत कथा है। यह तो

तुलसीदास जी का वैचारिक निरूपण है कि उन्होंने कराल कलिकाल के लोक-प्रभाव बारे में पहले ही लिख दिया। भूत और वर्तमान तो कोई भी लिख सकता है, जो भविष्य लिख दे, वही महान् ।

आगे लोक-दृष्टि देखिए कि इसमें न केवल मानव तन की महिमा का स्थापन हुआ है, अपितु इसके दुःख सुख एवं कारणों का समीचीन मूल्यांकन हुआ है-

"नहिं दरिद्र सम दुःख जग माँही।

संत मिलन सम सुख जग नाहीं।।"

वस्तुतः, रामचरितमानस में मर्यादा पुरुषोत्तम राम के दिव्य उदात्त चरित्र की शाश्वत प्रतिष्ठा करते हुए उन्हें महत्तम मानवीय त्याग, अनुपम प्रजारंजन, प्रबल और प्रखर उद्धारक, भक्त वत्सल, दीन हितकारी के साथ ईश्वरत्व की गरिमा से पूर्ण आराध्य रूप में प्रतिस्थापित किया गया है। इसमें आदर्श राजा और प्रजा के रिश्ते को भी दर्शाया गया है। राम, अयोध्या के राजा होते हुए भी अपनी प्रजा के प्रति अत्यंत संवेदनशील और कर्तव्यनिष्ठ थे। वे समाज के हर वर्ग के हित और कल्याण के प्रति समर्पित थे। रामराज्य का वर्णन इस बात का प्रमाण है कि तुलसीदासजी ने एक आदर्श समाज की परिकल्पना की थी, जहाँ राजा और प्रजा के बीच का संबंध विश्वास और सहयोग पर आधारित हो।

रामचरितमानस में धर्म और न्याय की स्थापना का भी विशेष महत्त्व है। राम ने अपने जीवन में हर कदम पर धर्म और न्याय का पालन किया। चाहे वह कैकेयी के वनवास का आदेश हो या फिर रावण के साथ युद्ध, राम ने सदा धर्म और न्याय का पालन किया। इस प्रकार उन्होंने समाज में धर्म और न्याय की स्थापना का संदेश दिया:

“धरम न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुरान बखाना।”

रामचरितमानस में गुरू-शिष्य के संबंधों को भी महत्त्व दिया गया है। राम और विश्वामित्र के संबंध, राम और वशिष्ठ के संबंध, सभी ने गुरू-शिष्य के आदर्श संबंधों को स्थापित किया है। ये संबंध समाज में शिक्षा और संस्कार के महत्त्व को दर्शाते हैं, जो कि लोकमंगल के लिए अनिवार्य हैं।

रामचरितमानस में तुलसीदास जी ने रामकथा के माध्यम से लोकमंगल के अनेक तत्त्वों को प्रस्तुत किया है। परस्पर प्रेम, सम्मान, सामाजिक समरसता, धर्म, न्याय, और आदर्श राजधर्म की स्थापना के माध्यम से उन्होंने समाज के हर वर्ग के कल्याण की बात कही है। इस प्रकार रामचरितमानस न केवल एक धार्मिक ग्रंथ है, बल्कि समाज के हर वर्ग के हित और कल्याण का संदेश देने वाला एक महाकाव्य और लोककाव्य भी है।

रामचरितमानस में रामकथा को आत्मशांति और समाज के कल्याण का मार्ग बताते हुए यह स्पष्ट किया है कि यह शरीर और मन के सभी प्रकार के रोगों को दूर करने वाली संजीवनी है -

बुध बिश्राम सकल जन रंजनि। रामकथा कलि कलुष विभंजनि।

कहा जा सकता है कि गोस्वामीजी ने अपनी रामकथा के माध्यम से एक आदर्श समाज की परिकल्पना की है, जहाँ सभी लोग सुखी रहें, सभी सांसारिक माया मोह से दूर रहें और सभी सत्कल्याणमय कार्यों के अभिलाषी रहें। रामचरितमानस में जीवन के विभिन्न पहलुओं पर गहन दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। इसमें मुखिया, राजा, मित्र, पत्नी, और लोकधर्म के आदर्श स्वरूप का सुंदर वर्णन मिलता है, जो समाज को दिशा प्रदान करता है।

मुखिया कैसा हो? मुखिया का कार्य समाज को सही मार्गदर्शन और नेतृत्व देना है। मुखिया को धैर्यवान, न्यायप्रिय और समर्पित होना चाहिए। रामचरितमानस में, भरत द्वारा राम के लिए प्रकट किए गए आदर्श गुणों को एक अच्छे मुखिया के लिए आदर्श माना जा सकता है:-

“मुखिया मुख सो चाहिए, खान पान कहुँ एक।

पालइ पोषइ सकल अंग, तुलसी सहित विवेक॥”

अर्थात् मुखिया को मुख की तरह होना चाहिए, जो सभी अंगों का पोषण करता है और उनके बीच संतुलन बनाए रखता है। और यह बात परिवार से लेकर पूरे समाज तक हर स्तर के मुखिया के लिए है।

मित्र कैसा हो? मित्रता में सच्चाई, विश्वास और सहयोग होना चाहिए। सुग्रीव और राम की मित्रता इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। सुग्रीव का दुःख सुनने के उपरांत श्रीराम कहते हैं -

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहि बिलोकत पातक भारी॥

निज दुख गिरि सम रज करि जाना। मित्रक दुख रज मेरु समाना॥

भावार्थ है कि सच्चा मित्र वही है, जो अपने मित्र की कठिनाइयों को अपनी कठिनाइयों से बढ़कर जाने और उसकी सहायता करे। उसके सुख-दुःख में सहभागी बने।

पत्नी कैसी हो? पत्नी को पति का सहयोगी, मित्र और मार्गदर्शक होना चाहिए। सीता का चरित्र एक आदर्श पत्नी का प्रतीक है। उन्होंने हर परिस्थिति में राम का साथ दिया:

“जनकसुता जग जननि जानकी। अतिसय प्रिय करुणानिधान की॥”

सीता का राम के प्रति अटूट प्रेम और समर्पण एक आदर्श पत्नी के गुणों का वर्णन करता है।

लोक में सत्संग की महिमा अपरंपार मानी जाती है। मानस में वर्णन मिलता है-

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला एक अंग।

तूल न ताहि सकल मिले, जो सुख लव सत्संग।।

आश्वस्ति है कि लोक ‘धर्म’ से परिचालित होता है। पर, लोकधर्म कैसा हो? मानस के अनुसार यह धर्म सहिष्णुता, समर्पण, और परोपकार पर आधारित हो:-

“परहित सरिस धर्म नहीं भाई। पर पीड़ा सम नहीं अधमाई॥”

निश्चिय ही ये गुण समाज के सभी लोगों को या लोक को प्रेरणा देते हैं और एक आदर्श समाज की स्थापना में सहायक होते हैं। वस्तुतः, तुलसीदास ने सदाचार और परोपकार को भक्ति का अनिवार्य अंग माना है। उनका कहना है कि बिना सदाचार के भक्ति अधूरी है और वह आडंबर बनकर रह जाती है। श्री राम को नितांत ईश्वर मानते हुए उन्होंने उनके लोककल्याणकारी स्वरूप का वर्णन किया है। उन्होंने राम को दुष्टों का संहारक और सज्जनों का रक्षक बताया तथा राम के अवतार का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए कहा:-

“बिप्र धेनु सुर संत हित, लीन्ह मनुज अवतार।"

तुलसी ने यह स्पष्ट रूप से माना है कि बिना सदाचार के भक्ति की धारणा आडंबर है। इसीलिए उन्होंने ईश्वराधना में सदाचार का अमर-बन्ध लगा दिया, जिससे कि भक्त का मन डांवांडोल न हो सके और आडंबरों एवं दिखावे से दूर रहकर सच्ची भक्ति करने मे सक्षम हो।

“हम लखि हमार लखि, हम हमार के बीच ।।

तुलसी अलखहि का लखै, राम नाम जपु नीच ।। “

अर्थात् माया के बंधन में बंधकर और माया के भोगों को भोगते हुए तू अलख को कैसे देखेगा। इसलिए अरे नीच राम नाम का जाप कर ताकि तू माया के बंधन से मुक्त होकर अलख को देख सके। उन्होंने हर ढोंगी व्यक्ति को यह उपदेश दिया है कि -

“राम नाम के आलसी, भोजन के होशियार ।

तुलसी ऐसे नरन को बार बार धिक्कार ।

राम नाम लीयो नहीं, कियौ न हरि ते हेत ।

वे नर यौं ही जाएंगे, जौं मूरी को खेत ।। “

आज भी लोक में ‘राम नाम के आलसी, भोजन के होशियार’ खूब प्रचलित है। इसी प्रकार, 'पंडित सोई जो गाल बाजवा' जैसे चुटीले उध्दरण हों, ज्ञान का संधान हो, या फ़िर सूक्तिपरकता की छटा और उद्धरणीयता की मोहक शैली मानस में सब-कुछ है और सब ‘लोक’ से संपृक्त है।

तुलसी ने लोक-कल्याण का मार्ग भी ऐसा सहज मार्ग बताया है, जो सामान्य जनता अर्थात् लोक के लिए अनुकरणीय है, जिसमें धन, बुद्धि, वैभव की आवश्यकता नहीं है। राम नाम का जाप, सदाचार पालन और राम कथा का निरंतर पारायण, इस त्रिगुणात्मक भक्ति पथ पर चलकर मनुष्य का अवश्य ही मंगल होता है। गोस्वामी तुलसीदास ने जिस नवधा भक्ति का उपदेश श्री राम द्वारा शबरी को दिलवाया है; उसमें भी

सर्वत्र आचरण की व्यावृति है। तुलसी की भक्ति दिखावे से मुक्त है। नवधा-भक्ति का महत्त्व बताकर तुलसीदास ने लोक-मंगल का मार्ग प्रशस्त किया। नवधा भक्ति के अनुसार संतों का संग, राम कथा का श्रवण, गुरु सेवा, राम गुणों का गान, राम नाम का जाप और संतोष जैसे गुणों को अपनाने पर जोर दिया गया है।

लोक-मंगल के लिए यह आवश्यक है कि संतोषी बनें और भूलकर कभी किसी की निंदा न करें। भाव यह है कि परदोषदर्शक अपने दोषों को भूलकर पाप का भागी बनता है। ऐसा व्यक्ति कभी भी लोक-मंगल की ओर नहीं जा सकता। श्री राम की नवधा भक्ति में अंतिम भक्ति यह है कि मनुष्य को समान भाव रखना चाहिए।

गोस्वामी तुलसीदास ने अपनी भक्ति में सत्संग पर भारी बल देते हुए इसे रामभक्ति और लोक मंगल का प्रथम चरण माना है। इसी से ज्ञान उत्पन्न होता है। ज्ञान से वैराग्य उत्पन्न होता है। तभी मन भक्ति में लगता है और भगवान के चरणों मे मन लगाए बिना न लोक-मंगल होता है न ही भक्ति प्राप्त होती है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि तुलसीदास का काव्य लोककल्याण का दिव्य दीप है और मनुष्य के लोककल्याण का मुक्ति पथ है। रामचरितमानस में निहित भगवान श्रीराम का चरित्र, भक्ति भावना, धर्म निरूपण, दर्शन, जीवन दर्शन तथा नीति आदि के हर पृष्ठ पर ऐसे सुंदर पुष्प विद्यमान हैं जिनसे निरंतर लोकमंगल की मनोहारी सुगंध निकलती रहती है। इस प्रकार रामचरितमानस में तुलसीदास ने समाज को सदाचार, परोपकार और समन्वय का मार्ग दिखाया है। उनके काव्य में निहित लोक-तत्त्व आज भी समाज को सही दिशा देने और कल्याणकारी जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करते हैं।

संदर्भ :

1 - ऋग्वेद

2. महाभारत

3 - हिंदी साहित्य की भूमिका, आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी

4 - कल्याण, वर्ष - 89, अंक - 9, गीताप्रेस

कमलेश कमल

चर्चित भाषाविद् एवं बेस्टसेलर पुस्तक 'भाषा संशय शोधन' के लेखक;

संप्रति- जनसंपर्क अधिकारी एवं प्रकाशन प्रमुख, आईटीबीपी